THE TIMES OF INDIA

Date: 27-09-25

Listen To Ladakh

GOI must engage protesters, even if they demand a lot

TOI Editorials

Explanations for "the bloodiest day" in Ladakh remain sharply divided between govt and protesters. But one thing on which there should be consensus is what BJP leader and former Ladakh MP Jamyang Tsering Namgyal has written in his letter to the Lt Governor, "Ladakh stands at a fragile juncture." The mood in the Himalayan desert region has darkened a lot since it became a separate Union Territory after the abrogation of Article 370. At the time, Namgyal himself gave such a passionate parliamentary speech welcoming these developments that it went viral. Engineer-innovator Sonam Wangchuk, who inspired 3 Idiots, also welcomed them heartily. Wangchuk has now been arrested, with govt linking Wednesday's mob violence and arson to his "provocative" speeches.

None of this, of course, explains why four unarmed protesters died with multiple bullet wounds that day. Even those who don't appreciate how Wangchuk's been talking up a Gen-Z revolution of the Nepal type in Ladakh, should recognise that over-strong police action is the opposite of a solution in this case. Yes, the big local asks of both statehood and inclusion in the Sixth Schedule are difficult to meet. With its 3L population Ladakh has zero chance of getting statehood when it's still denied to J&K. As for the Sixth Schedule, no govt, whatever its political stripe, is likely to open this Pandora's box. If it did, Manipur would be ahead of Ladakh in the line. But GOI has a time and tested way of walking situations back from crisis, which is to really get into engage mode.

Govt told a parliamentary committee this year that none of the 1,275 gazetted posts in Ladakh have been filled since 2019. Wangchuk and others' talk of Ladakh becoming another Tibet is of course utter nonsense - one is without even a fraction of persecution of the other. But Ladhakis' fears of becoming climate refugees are connected to real environmental vulnerabilities that need to be taken very seriously. Hearing and calming by the Centre is the need of the hour.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 27-09-25

Clear Our Cities of All Hoarding Muck

ET Editorials

Billboards can be interesting, informative, even delightful. Think Times Square. Think Shanghai. In Indian cities, tho- ugh, they can be a pestilence, especially during the festive season when whole cities seem covered pell-mell in product placement splatter. Sprout like weeds, many flout Indian Outdoor Advertising Association (IOAA) rules, which specify sizes, spacing, angles, heights, and safe distances from traffic signals. One fallout of this rule-bending was the accident in Mumbai's Ghatkopar in 2024, when a giant hoarding collapsed on a petrol pump, killing 17 people. A high-level committee has now found that approvals were granted without structural stability certificates, or proper tendering process. Why does that not surprise us?

Existing laws, like Prevention of Defacement of Property Act, remain toothless. Political interference, bureaucratic sloth and lack of accountability ensure illegal hoardings proliferate unchecked. Instead of turning a blind eye and putting public safety at risk, authorities must conduct regular removal drives, levy heavy penalties on advertisers and employ tech to monitor compliance. QR codes on legal hoardings can verify permits instantly, while drones and remote monitoring can track violations in real time.

Festival and election seasons exacerbate the problem. Aggrieved citizens have increasingly turned to courts, which have repeatedly demanded that illegal sky signs be removed and municipal bodies report action taken. These violations not only deface our cities but also expose municipal impotence. Illegal hoardings are more than a cosmetic nuisance- they are a public safety threat that choke traffic, endanger pedestrians and undermine emergency response. Viksit starts with what is visible.

दैनिक भास्कर

Date: 27-09-25

बलूचों की जंग आजादी के लिए है आतंक के लिए नहीं

संपादकीय

यूएनएससी की प्रतिबंध समिति में पाकिस्तान के इस प्रस्ताव को कि बलूच लिबरेशन आर्मी और इसके सहयोगी संगठन मजीद ब्रिगेड को आतंकी घोषित किया जाए, फिलहाल यूएस, फ्रांस और यूके ने खारिज कर दिया। उनका मानना था कि पाकिस्तान इन संगठनों के अल कायदा या आईएस से संबंध होने का पुख्ता प्रमाण नहीं दे सका है। दरअसल बलूचों की लड़ाई का कारण पंजाब और सिंध - वर्चस्व वाले पाक हुक्मरानों द्वारा पिछले 77 वर्षों

से इस प्रांत को उपेक्षित रखना और दबाया जाना है। देश के क्षेत्रफल का 44% वाला यह राज्य खनिज व अन्य प्राकृतिक संपदा और उपजाऊ जमीन से भरपूर है लेकिन जीडीपी में योगदान मात्र 7 फीसदी है। 5 से 16 वर्ष के 70% बच्चे स्कूल का मुंह नहीं देखते। पाक सरकार की रिपोर्ट के अनुसार प्रांत की 65% आबादी युवाओं की है जो बेरोजगार हैं। सात दशक से ज्यादा के अविकास, प्रशासनिक उपेक्षा और सैन्य दमन ने बलूच समाज को मजबूर किया कि वे अपनी आजादी की मांग को लेकर हथियार उठाएं। ग्वादर पोर्ट के विकास में चीन के दखल की नीति बगैर बलूच लोगों के राय के बनी। यही कारण है कि चीन भी बलूच आंदोलन के दमन में पाक-शासन के साथ खड़ा है। अगर पाकिस्तान किसी संगठन को आतंकी घोषित कराने के लिए यूएनएससी के फोरम का इस्तेमाल करे तो यह मजाक ही माना जाएगा।

Date: 27-09-25

एक देश के रूप में हमें सच्ची असहमतियों की जरूरत है

पवन के. वर्मा, (पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक)

हाल ही में, नेपाल की जेन-जी क्रांति को लेकर मैं एक टीवी बहस में सहभागिता कर रहा था। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि न्यूज एंकर नेपाल में ऐसा क्यों हुआ, इसके कारणों का विश्लेषण करने के बजाय इस बात को लेकर ज्यादा चिंतित थे कि हमारे यहां भी 'अराजकतावादी' ताकतें भारत को नेपाल बनाने की कोशिश कर रही हैं। सच कहूं तो इससे मैं हैरान था, क्योंकि भारत नेपाल नहीं हैं। नेपाल की राजनीतिक उथल-पुथल एक भिन्न ऐतिहासिक संदर्भ से उपजी थी। यह एक ऐसी स्थिति थी, जहां लोकतांत्रिक संस्थाएं परिपक्व नहीं हुई थीं और राज्यसत्ता अधिनायकवादी राजशाही और कमजोर लोकतंत्र के बीच झूल रही थी। दूसरी ओर, भारत 75 वर्षों से भी ज्यादा समय से कुछ खामियों के बावजूद एक कार्यशील लोकतंत्र रहा है। ऐसे में भारत में जाई जाने वाली असहमतियों की तुलना नेपाल की अराजकता से करना हमारे संवैधानिक गणराज्य की बुनियाद को नजरअंदाज करना है।

हाल के वर्षों में हमारा सार्वजनिक विमर्श एक परेशान करने वाली ध्रुवीकृत वस्तुस्थिति द्वारा तेजी से अपहृत होता जा रहा है। इसमें या तो कोई धुर राष्ट्रवादी और सरकार के प्रति पूरी तरह से निष्ठावान होता है, या उस पर अराजक इरादे रखने और राज्यसत्ता को ही ध्वस्त करने के मनसूबे संजोने का इल्जाम मढ़ दिया जाता है। भारत जैसे विशाल बहुलतावादी और जटिल लोकतंत्र में यह संकीर्ण नैरेटिव ठीक नहीं है। विरोध या आलोचना की

तुलना अराजकता के साथ करना न केवल बौद्धिक बेईमानी है, बल्कि ऐतिहासिक रूप से गलत और राजनीतिक रूप से भी खतरनाक है।

किसी भी कार्यशील लोकतंत्र में असहमति कोई विलासिता नहीं, बल्कि एक आवश्यकता होती है। भारतीय संविधान में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, शांतिपूर्ण सभा और विरोध-प्रदर्शन का अधिकार निहित है। अब यह कहना कि छात्रों, किसानों, मजदूरों या नागरिक समाज द्वारा किए गए विरोध-प्रदर्शन नेपाल सरीखी अराजकता या देशद्रोह तक के समान हैं, उनकी जायज शिकायतों के मूल कारणों की अनदेखी करना है। अगर आलोचना और तोड़फोड़ में कोई अंतर नहीं रह जाता, तब केवल एक मौन नागरिक ही स्वीकार्य नागरिक बनकर रह जाएगा। और मौन नागरिकों का लोकतंत्र केवल नाम का ही लोकतंत्र हो सकता है।

सच तो यह है कि गर्व करने लायक उपलब्धियों के साथ-साथ नागरिकों को चिंतित करने वाली कई शिकायतें भी मौजूद रहती हैं। एक तरफ तो देश में 'अमृत काल' यानी विकास के स्वर्णिम युग की बयानबाजी सार्वजनिक भाषणों और मीडिया की बातों पर हावी है। वहीं दूसरी ओर, बेरोजगारी बढ़ती असमानता, कठोर कानून, अधिनायकवाद, भ्रष्टाचार, क्षेत्रीय असंतुलन और लगातार गरीबी के कारण, खासकर युवाओं में स्पष्ट रूप से गहराती निराशा भी इसी देश का सच है ।

अगर इन मुद्दों पर जायज विरोध-प्रदर्शन होते हैं, तो सत्ता में बैठे लोगों के लिए आसान उपाय यही है कि इन्हें अराजकतापूर्ण घोषित कर दें। यह विचार कि किसी भी प्रकार की असहमति देश को तोड़ देगी, सत्तावादी उपायों को सही ठहराने में मदद करता है और विपक्ष के दमन का रास्ता खोलता है। लेकिन भारतीय राष्ट्र इतना कमजोर नहीं है कि कुछ छात्र विरोध-प्रदर्शन से उसे गिरा सकें विरोध-प्रदर्शन को अराजकता कहना भारतीय जनता की बुद्धिमत्ता का अपमान करना भी है। आम नागरिक किसी बड़ी साजिश का मोहरा नहीं होते है। देश के लोग सही और गलत में अंतर करने में सक्षम हैं, और उनका गुस्सा अकसर विचारधारागत पूर्वग्रहों नहीं, बल्कि वास्तविकता से प्रेरित होकर उपजता है।

विरोध और अराजकता के बीच इस झूठी तुलना का एक कारण मीडिया का एक वर्ग भी है। सत्ता पर सवाल उठाने के बजाय कई न्यूज चैनल दुष्प्रचार को बढ़ावा देते हैं, असहमति के इर्द-गिर्द उन्माद पैदा करते हैं और हर आलोचक को खलनायक साबित कर देना चाहते हैं। बुद्धिजीवी भी इसमें शामिल हैं- या तो अपनी चुप्पी या अपने चुनिंदा आक्रोश के जरिए देशभक्ति को किसी राजनीतिक दल के प्रति वफादारी के रूप में परिभाषित नहीं किया जा सकता।

एक देश के रूप में भारत को सूझबूझपूर्ण, रचनात्मक और समावेशी असहमति की जरूरत है। केवल एक आत्मविश्वासी राष्ट्र ही अपने नागरिकों को स्वतंत्र होकर बोलने, खुलकर आलोचना करने और शांतिपूर्ण ढंग से विरोध करने की अनुमति देता है। एक बेहतर भारत का रास्ता चुप्पियों नहीं, संवाद से होकर जाता है।

Date: 27-09-25

हमारे यहां चुनाव स्वतंत्र तो हैं किंतु क्या वे निष्पक्ष भी हैं?

राजदीप सरदेसाई, (वरिष्ठ पत्रकार)

क्या भारतीय चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष हैं? यही वो बहस है, जो राहुल गांधी द्वारा चुनाव आयोग पर हमले के साथ शुरू हुई है। मेरा कहना है कि भारतीय चुनाव आमतौर पर स्वतंत्र हैं, लेकिन जरूरी नहीं कि वो हमेशा निष्पक्ष भी हों। जवाहरलाल नेहरू ने आजादी के बाद जब सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार लागू करने की वकालत की थी तो कई लोगों ने इसे ना सिर्फ इतिहास का 'सबसे बड़ा जुआ' कहकर खारिज किया, बल्कि यह चेतावनी तक दी कि इससे हमारा नवोदित गणतंत्र और अधिक टुकड़ों में बंट जाएगा। लेकिन 18 आम चुनावों के बाद अब हम दावा कर सकते हैं कि चुनाव लोकतंत्र के प्रति नेहरू की प्रतिबद्धता जुआ नहीं, बल्कि भविष्य में किया गया निवेश था।

तथ्य गवाह हैं कि 1952 का पहला चुनाव चुनौतीपूर्ण मौसम और लॉजिस्टिक मसलों के कारण छह महीने तक चला। इसमें बनाए गए 1.96 लाख मतदान केंद्रों में से 27,527 महिलाओं के लिए आरक्षित थे। करीब 17.32 करोड़ वैध मतदाताओं में से 45% ने मतदान किया। इसकी तुलना में 2024 के चुनाव में 10.5 लाख मतदान केंद्रों पर 96.8 करोड़ वैध मतदाता थे। 64.6 करोड़ मतदाताओं ने वोट दिया, जिनमें 31.2 करोड़ महिलाएं थीं। किसी भी चुनाव में यह महिलाओं की सर्वाधिक भागीदारी थी। इतने बड़े पैमाने पर अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण चुनाव कराना एक उल्लेखनीय उपलब्धि है।

अब उस दौर को भी याद करें, जब किराए के गुंडे समूचे बूथ पर कब्जा कर लेते थे। फर्जी वोटिंग आम 1990 के महाराष्ट्र विधानसभा चुनाव के दौरान मैंने मुंबई के उमेरखड़ी में एक बूथ कैप्चरिंग देखी थी। प्रदायिक तनाव के बीच हुए उस चुनाव में मुस्लिम लीग और शिवसेना आमने-सामने थीं। हमने दोनों पक्षों को स्थानीय पुलिसकर्मियों को धमकाकर मतदान केंद्रों पर कब्जा करते और मतपत्रों पर मुहर लगाते देखा था। यह ईवीएम और टीवी से पहले का युग था, लेकिन हमारी खबरों और तस्वीरों के आधार पर री-पोल करवाया गया। आज भी बंगाल के कुछ हिस्सों में चुनाव से पहले हिंसा होती है। 2024 में पश्चिमी यूपी खासकर मुस्लिम बहुल इलाकों में पुलिस की मिलीभगत से मतदाताओं को धमकाने की खबरें आईं।

लेकिन आज मतदाता पहले से कहीं अधिक जागरूक और सशक्त हैं। मुझे याद है कि हरियाणा की एक यात्रा में ग्रामीण दलितों ने मुझे बताया था कि पहले के जमाने में उनके बुजुर्ग दबंगों के डर से वोट ही नहीं दे पाते थे। बदलते जातिगत समीकरणों और मीडिया के कारण आज ऐसा होने की संभावना कम है। देखें तो मतदान हमारे समाज में नागरिकों की दुर्लभ समानता का जश्न है। इस दिन जामनगर रिफाइनरी का मजदूर भी अम्बानी के बराबर मताधिकार रखता है और धारावी का निवासी भी अदाणी की तरह मतदान कर सकता है।

भारत में चुनाव अधिक स्वतंत्र तो हुए हैं, लेकिन उनमें निष्पक्षता जरा कम है। समान अवसर देने की भावना चुनावी लोकतंत्र के केंद्र में है। हर उम्मीदवार और पार्टी की दौड़ एक ही जगह से शुरू होनी चाहिए, लेकिन आज इस दौड़ में सत्ताधारी अपने विपक्षियों पर पूरी तरह हावी हैं। यह धनबल और सत्ता के दुरुपयोग के घातक गठजोड़ का नतीजा है। भारतीय राजनीति में धनबल हमेशा से रहा है। जब कांग्रेस हावी थी तो पैसे तक उसकी पहुंच प्रतिस्पर्धियों से कहीं अधिक थी। चुनावी जंग में पैसा निर्णायक तो नहीं होता, किंतु धन-समृद्ध दलों को महत्वपूर्ण बढ़त जरूर देता है।

लेकिन, असल गेम चेंजर तो यह है कि समान अवसर की अवधारणा को पूरी तरह तोड़-मरोड़ने के लिए सत्ता की ताकत को किस प्रकार 'हथियार' बनाया जाता है। प्रतिस्पर्धियों को निशाना बनाने के लिए सरकारी एजेंसियों का इस्तेमाल किया जाता है। चुनाव से पहले सत्तारूढ़ दल द्वारा करदाताओं के पैसे को कल्याणकारी योजनाओं के नाम पर चुनिंदा मतदाता समूहों में बांटना आम हो गया है। 'रेवड़ी पोलिटिक्स' के खेल में आज भाजपा ही बड़ी खिलाड़ी है- चाहे महाराष्ट्र में लाड़की बहन योजना हो या अब बिहार में मुख्यमंत्री महिला रोजगार योजना | नैरेटिव को नियंत्रित किया जाता है। सत्तारूढ़ दल सरकारी पैसे का इस्तेमाल कर विज्ञापनों के नाम पर पैसा लुटाते हैं।

2024 के चुनावों से पहले आयकर विभाग ने 1990 के दशक से संबंधित प्रकरणों पर कांग्रेस को नोटिस जारी कर उसके खाते फ्रीज कर दिए, लेकिन आयोग ने कार्रवाई नहीं की। साम्प्रदायिक बयानबाजी अनियंत्रित रही। जब कर्नाटक में संभावित वोटर फ्रॉड पर मामला दर्ज होता है तो आयोग पुलिस जांच में शामिल होने में हिचकिचाहट दिखाता है। जबकि निष्पक्ष चुनाव के लिए ऐसे आयोग की जरूरत है जो निष्पक्षता से कार्रवाई करे।

दैनिक जागरण

Date: 27-09-25

हठधर्मी का नतीजा है लेह की हिंसा

अवधेश कुमार, (लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

लेह की हिंसा ने पूरे देश को चिंतित किया है। लेह में हिंसा वाले दिन लग रहा था जैसे अराजकता के रूप में नेपाल की लघु रूप में पुनरावृत्ति हो रही हैं। पहाड़ी परिषद से लेकर भाजपा कार्यालय को स्वाहा करने पर भीड़ उतारू थी। भीड़ ने सुरक्षाकर्मियों के वाहनों को भी निशाना बनाया। यह सब बिना तैयारी के संभव नहीं लगता। सामाजिक एवं पर्यावरण कार्यकर्ता सोनम वांगचुक ने हिंसा के बाद 15 दिन से जारी आमरण अनशन समाप्त कर दिया। उन्होंने शांति की अपील भी की। हालांकि उनका यह भी मानना है कि शांतिपूर्ण प्रदर्शन से परिणाम नहीं निकलने के कारण युवाओं में निराशा बढ़ी है। यानी वे कह रहे हैं कि गुस्सा जायज हैं, पर हिंसा ठीक नहीं 15 दिन से आमरण अनशन पर बैठे सोनम वांगचुक और उनके साथियों के लगातार आ रहे वक्तव्यों और घटनाओं को देखने से हमें लग सकता है कि आंदोलन का सरकार ने संज्ञान नहीं लिया, इसलिए लोगों में गुस्सा पैदा हुआ होगा। सरकार की और से लेह की हिंसा के लिए सोनम बांगचुक को उत्तरदायी ठहराने से ऐसा भी लग सकता है कि वह आंदोलन से नाराजगी के कारण आरोप लगा रही है। सच क्या है?

सोनम वांगचुक, लेह अपेक्स बाडी यानी एबील और कारगिल डेमोक्रेटिक अलायंस द्वारा रखी गई मांगों, उठाए मुद्दों पर केंद्र द्वारा गठित उच्च स्तरीय समिति की बैठक छह अक्टूबर को तय थी। स्वयं एबीएल ने समिति में जिन नए सदस्यों के नाम सुझाए थे, उन पर भी सहमति बन गई थी। तो फिर समस्या कहां थी ? पहली बात तो यह कि अनेक मांगों को पूरा किया जा चुका है और राज्य को छठी अनुसूची में शामिल करने तथा राज्य का दर्जा देने के विषय पर गतिरोध दूर करने के लिए बातचीत हो रही थी दूसरी, चार जिलों के गठन की प्रक्रिया अंतिम दौर में है। तीसरी, लद्दाख में अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षण 45 प्रतिशत से बढ़कर 84 हो चुका है। चौथी पंचायत में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है पांचवीं, भोटी और पुर्गी आधिकारिक भाषा घोषित हो चुकी हैं। छठी, 1800 पदों पर भर्ती प्रक्रिया भी शुरू है और अलग लोक सेवा आयोग के गठन पर भी विचार किया जा रहा है। यह सब केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा गठित उच्च अधिकार प्राप्त समिति के साथ लख के विभिन्न संगठनों की वार्ताओं में संपन्न समझौतों के ही परिणामस्वरूप हुआ। जब बैठक छह अक्टूबर से पहले बुलाने की मांग की गई तो सरकार ने संदेश दिया कि 25 या 26 सितंबर को वैकल्पिक बैठक की जा सकती है और उस पर विचार हो रहा था। फिर यकायक ऐसा क्या हुआ कि लोग हिंसा करने लगे? सच यह है कि लेह में अरब स्प्रिंग और नेपाल के जैन जी जैसी हिंसा का मनोविज्ञान पैदा करने की कोशिश हुई।

सोनम वांगचुक की छवि समाजसेवी की है, पर जैसे उनके बयान हैं, वे संतुलित निर्णय करने, शांति और सद्भाव की कामना रखने वाले व्यक्ति के नहीं दिखते। निःसंदेह यह भी नहीं कह सकते कि सोनम ने लद्दाख में सकारात्मक कार्य नहीं किया। उन्होंने किया है, पर लद्दाख और कारगिल में ऐसे लोगों की भी बड़ी संख्या है, जो उनकी गतिविधियों पर प्रश्न उठाते हैं। उनके एनजीओ की विदेशी फंडिंग और संबंधों को लेकर स्थानीय राजनीतिक, सामाजिक कार्यकर्ता प्रश्न उठाते रहे हैं। उनकी गिरफ्तारी के बाद इसकी जांच भी हो रही है। कोई भी आंदोलन जिन मांगों के लिए शुरू होता है, वे सब पूरी नहीं होतीं। उचित-अनुचित, तात्कालिक और दूरगामी

दृष्टियों से विचार कर बीच का रास्ता निकाला जाता है जब आप अरब स्प्रिंग की बात करते हुए मास्क पहनकर युवाओं को उसका तरीका बताएंगे एवं नेपाल के जैन जी की प्रशंसा करेंगे तो उसमें विवेक, संतुलन एवं व्यावहारिकता की गुंजाइश समाप्त हो जाती है।

लाख की स्वायत्तता का संघर्ष वर्षों पुराना है। इनमें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और भाजपा सहित अन्य संगठन शामिल रहे हैं। वर्तमान संवैधानिक ढांचे के तहत कोई यह कहे कि वैकल्पिक न्याय प्रणाली और स्थानीय स्वशासन की प्रशासन एवं वित्त मामलों में एक अलग व्यवस्था का विकल्प मिले तो क्या वह तुरंत स्वीकार हो सकता है? क्या मांग करने वाले को नहीं पता कि वह परोक्ष रूप से संवैधानिक ढांचे के बाहर की कुछ मांगें रख रहा है। लद्दाख सीमांत क्षेत्र हैं। चीन और पाकिस्तान की वहां नजर है। अक्साई चीन वस्तुतः चीन अधिकृत लाख ही है। गलवन की घटना के बाद सरकार चीन सीमा तक आम नागरिकों और रक्षा यातायात की दृष्टि से आवश्यक विस्तार कर रही है। इस सबको पर्यावरण से जोड़कर विरुद्ध वातावरण बनाना हर दृष्टि से अनुचित है। छठी अनुसूची में शामिल होने के पीछे अनेक तर्कों में एक यह भी है कि बाहरी लोग जमीन खरीद कर बसेंगे तो यहां की संस्कृति, सभ्यता सब कुछ प्रभावित होगी। पांच अगस्त, 2019 से पूर्व जमीन खरीदन तो छोड़िए, कोई जम्मू-कश्मीर की नागरिकता तक नहीं प्राप्त कर सकता था। इसके बावजूद लाख किन हालात में था? अनुच्छेद 370 और 35 ए के रहते आम लड़खियों की मांग थी कि हमें कश्मीर घाटी से मुक्ति दी जाए। यहां के लोग कश्मीर घाटी पर शोषण, समस्याओं की अनदेखी के आरोप लगाते थे । ये एक हद तक सच भी थे। तब लाखियों की मूल मांग थी - क्षेत्र को जम्मू-कश्मीर से अलग केंद्र शासित प्रदेश में लाया जाए तथा विकास के लिए अधिकार प्राप्त स्वायत्त परिषद का गठन किया जाए। केंद्र सरकार ने ऐसा ही किया। सुधार क्रमिक प्रक्रिया होती हैं। दो संसदीय क्षेत्र की मांग गलत नहीं है, किंतु यह डीलिमिटेशन में ही संभव हो सकेगा। आंदोलनकारियों को इन सब बातों का पता है। फिर भी हठधर्मिता दिखाई गई।

हिंसा भड़कती है तो नियंत्रण में नहीं रहती । इस समय भारत और विश्व में यही प्रवृत्ति दिख रही है कि हमारी मांगें तत्काल पूरी करो नहीं तो सब कुछ ध्वस्त करेंगे। यही खतरनाक प्रवृत्ति लेह में दिखी । सच्चाई यह है कि लख के शांति प्रिय लोगों का बहुमत कभी भी वैसी अराजकता के पक्ष में नहीं हो सकता, जैसी लेह में देखने को मिली।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 27-09-25

'इस्लामिक नाटो' का नया समीकरण

डॉ . सुरेन्द्र कुमार मिश्र

विगत 17 सितम्बर 2025 को सऊदी अरब और पाकिस्तान के बीच एक रणनीतिक गठबंधन 'स्ट्रेटजिक म्युचुअल डिफेंस एग्रीमेंट' रियाद में हुआ। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ और सऊदी क्राउन प्रिंस मोहम्मद बिन सलमान के बीच हस्ताक्षर हुए जिसे वर्तमान दौर का इस्लामिक नाटो (मुस्लिम उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन) समझौता का नाम दिया जा रहा है। इस समझौते में कहा गया है कि एक देश पर आक्रमण को दूसरे देश पर आक्रमण माना जाएगा। नाटो के अनुच्छेद-5 की तरह काम करने की बात कही गई है। इस समझौते से यह भी अब समझने की आवश्यकता है कि भारत पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव क्या होगा?

भारत पर इसका प्रभाव समझने के पूर्व समझौते की व्याख्या करना जरूरी है। वास्तव में यह समझौता संभावित मुस्लिम महाशक्ति की नींव के रूप में देखा जा रहा है, जिसमें पाकिस्तान की परमाणु शक्ति तथा सऊदी अरब की आर्थिक ताकत के साथ आने के संकेत हैं। परिणामस्वरूप एक संभावित 'महाशक्ति' का उदय हो सकता है। समझौता पारंपरिक लेन-देन पर आधारित कूटनीति से बढ़कर संस्थागत सुरक्षा साझेदारी की ओर संकेत कर रहा है। पाकिस्तान का कहना है कि यह सुरक्षात्मक समझौता है, आक्रामक सोच वाला नहीं किंतु सऊदी अरब के अधिकारियों के मुताबिक समझौते के तहत 'सभी सैन्य साधन' भी शामिल होंगे। इस समझौते के पीछे एक तात्कालिक कारण यह है कि खाड़ी और मध्य पूर्व की सुरक्षा की स्थिति में बढ़ी हुई अनिश्चिता विशेष रूप से इस क्षेत्र में अन्य देशों के हथियारबंद संघर्ष एवं आक्रामक गतिविधियों के बढ़ने के चलते।

समझौते की मीमांसा के पूर्व इसकी प्रमुख बातों का भी उल्लेख जरूरी है ताकि इसके दूरगामी रणनीतिक पहलुओं को समझा जा सके साझा सुरक्षा बंधन अगर दोनों देशों से किसी एक देश पर असर होता है, तो उसे दोनों देशों पर हमला माना जाएगा। रक्षा सहयोग और समर्थन इसके अंतर्गत दोनों देश सैन्य प्रशिक्षण, हथियारों की आपूर्ति, तकनीकी हस्तांतरण तथा सह-उत्पादन पर विशेष बल देंगे। परमाणु बचाव रणनीति पाकिस्तान के पास लगभग 170 परमाणु हथियार हैं, जबकि सऊदी अरब के पास एक भी परमाणु हथियार नहीं हैं। इस डील द्वारा पाकिस्तान सऊदी अरब को परोक्ष रूप से परमाणु सुरक्षा कवच प्राप्त होने की संभावना है ईरान के परमाणु संकट को संतुलित करने हेतु वास्तव में ईरान के परमाणु कार्यक्रम को बड़ा संकट मानकर उसका संतुलन स्थापित करने की दृष्टि से भी सऊदी अरब एवं पाकिस्तान का यह समझौता हुआ है। अमेरिकी की दोहरी भूमिका का परिणाम इस डील में हाल में पाकिस्तान के साथ की गई डिफेंस डील और उसकी शांतिपूर्ण अनुमति के आधार पर हुई है, ताकि सऊदी अरब की सुरक्षा का बोझ पाकिस्तान पर डाला जा सके।

समझौते में प्रावधान है कि रक्षा के लिए सभी सैन्य साधनों का उपयोग किया जा सकता है इसके तहत सैन्य सहयोग से लेकर आधुनिक रक्षा प्रणालियां भी शामिल हैं। दोनों देशों का कहना है कि यह रक्षा डील क्षेत्रीय सुरक्षा और स्थिरता के लिए है, पश्चिम एशिया और खाड़ी क्षेत्र की बदलती परिस्थितियों को विशेष रूप से दृष्टिगत

रखते हुए किया गया है। इस समझौते के अंतर्गत सैन्य अभ्यास, सैन्य प्रशिक्षण तथा रक्षा तकनीकी, साझेदारी को विशेष बढ़ावा दिया जाएगा। यद्यपि यह समझौता प्रमुख रूप से रक्षा से संबद्ध है, लेकिन सऊदी अरब-पाकिस्तान संबंध पहले से ही तेल, वित्तीय सहायता और श्रमिक योगदान पर आधारित हैं। इस समझौते के साथ अब दोनों देशों के बीच प्रगाढ़ता और गहरी हो सकती है। एक समझौता क्या भू-राजनीतिक समीकरण में बदलाव ला सकता है? यह समझौता एक नये ध्रुवीकरण का भी संकेत देता है, जो भारत की मध्य पूर्व में सामरिक भूमिका को भविष्य में बड़ी चुनौती दे सकता है। विचारणीय विषय यह है कि क्या इससे वैश्वीकरण के इस दौर में समीकरण भी बदल जाएंगे ? यह भारत के लिए रणनीतिक चुनौती बन सकता है, क्योंकि पाकिस्तान को सऊदी अरब से आर्थिक राजनीतिक समर्थन मिलने पर कश्मीर में आतंकवाद जैसा संवेदनशील मुद्दा पुनः खड़ा हो सकता है, जो भारत की स्थिति हेतु बड़ा संकट बन सकता है।

अरब देशों ने हाल के महीनों में इस्राइल की आक्रामक कार्यवाहियों विशेष रूप से कतर तथा ईरान पर सैन्य हमलों के बाद अमेरिका की सुरक्षा साझेदार के रूप में विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लगाए हैं। निश्चित ही पाकिस्तान और सऊदी अरब के बीच रक्षा समझौते से भारत की चिंता बढ़ना स्वाभाविक है क्योंकि इसे सामान्य समझौता नहीं समझना चाहिए। चूंकि यह पश्चिम एशिया में बदलते भू-राजनीतिक समीकरणों के बीच हुआ है। भारत के साथ सऊदी अरब की आर्थिक साझेदारी भी गहरी है। सऊदी अरब भारत का पांचवां सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार जबकि भारत उसका दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी है। यही नहीं, सऊदी अरब में भारत-पाकिस्तान के तनाव के दौरान संयमित रुख अपनाया। पुलवामा आतंकी हमलों की निंदा की किंतु भारत द्वारा अनुच्छेद 370 को हटाने तथा बालाकोट हमलों की आलोचना करने से भी परहेज किया। सऊदी अरब का सर्वोच्च नागरिक सम्मान वर्ष 2016 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को उनकी यात्रा के दौरान दिया गया। ऐसी स्थिति में भारत को संयम सतर्कता, सजगता एवं संतुलित ढंग से काम करने की आवश्यकता है।

वास्तव में यह समझौता भारत के लिए अपने पश्चिमी पड़ोस के प्रबंधन को जटिल बनाता है, विशेषकर इसलिए क्योंकि यह इस्लामी दुनिया में पाकिस्तान की स्थिति को सक्षम और सशक्त करता है। भारत की चिंताएं और चुनौतियां समझौते पर उसकी आधिकारिक टिप्पणी और बयानबाजी से समझी जा सकती हैं। पाकिस्तान कभी भी भारत का भरोसेमंद नहीं रहा व उसकी राजनीति भी भारत विरोध पर ही संचालित होती है। निर्विवाद है कि यह गठबंधन बड़ा आकार लेता है, तो खाड़ी और दक्षिण एशिया की सुरक्षा रणनीति को बदल सकता है। यह समझौता भारत, इस्त्राइल और पश्चिमी देशों के लिए नई चुनौती बन सकता है।